International Journal of Research in Economics and Social Sciences (IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 1, January- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor(SJIF): 6.939 |

'' सुमित्रानंदन पंत के काव्य में प्रकृति चित्रण ''

संतोष कुमार यादव (हिन्दी)
शासकीय श्यामा प्र0मुखर्जी महा0
सीतापुर,जिला– सरगुजा छ0ग0
E mail- santosh20sonu@gmail.com

साहित्य में जीवन की व्याख्या होती है और प्रकृति मानव जीवन का अभिन्न अंग है। अतः वह मानव जीवन की व्याख्या होती है। अतः वह मानव जीवन की व्याख्या का एक अनिवार्य उपादान बन जाती है। फिर भावुक साहित्यकार का तो प्रकृति से अत्यन्त अविच्छिन्न सम्बन्ध है। सुमित्रानंदन पंत को प्रकृति का सुकुमार कवि कहा जाता है इसका कारण उनके काव्य में प्रकृति के विभिन्न अवस्थाओं एवं दषाओं का मनोरम छटा बिखरी हुई है। पंत जी स्वयं स्वीकारते हुए कहते हैं कि काव्य करने की प्रेरणा उन्हें सर्वप्रथम प्रकृति से ही मिली। उनको ''कोमल'' या ''सुकुमार'' कवि कहना सवर्था युक्तिसंगत है। कोमल कवि वह होता है जो जीवन की कटुताओं एवं संघर्षों से दूर रहे। भीषणताओं से उसे दूराव हो तथा नई कोमल कल्पनाओं में डूबने और सुन्दर आकर्षण छवियों से उसे प्यार हो। हिन्दी की नूतन काव्य धारा का श्रीगणेष ''छायावादी'' कविता से माना जाता है। डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना के अनुसार, ''छायावादी रचना–शैली एवं छायावादी अनुभूति के प्रचार एवं प्रसार का सर्वाधिक श्रेय सुमित्रानंदन पंत को प्राप्त है। पंत ने काव्य के क्षेत्र में पदार्पण करते ही सर्वप्रथम अपने चारो ओर द्विवेदीकालीन काव्य–धारा के दर्शन किये थे। उनकी दृष्टि में ब्रजभाषा इतनी वयोवृद्ध एवं प्रभावहीन भाषा हो चुकी थी कि उसमें अपने मनोभावों को व्यक्त करना समीचीन नहीं था।'' यही कारण था कि पंत वयोवृद्ध ब्रजभाषा

की ओर से मुंह फेरे रहे और खड़ी बोली नव यौवना का उन्होंने उसी मुक्त मन और उल्लास– भाव से स्वागत किया जैसे कभी अकल्पनीय सौन्दर्य को देखकर विद्यापति ने कहा था– ''कि आरे नवयौवन अभिरामा। हिन्दी के अन्य छायावादी कवियों की अपेक्षा विशेष प्रसिद्धि मिलने का एक मात्र कारण भी संभवतः कविवर पंत की यही सौन्दर्योपासना रही है।

'' पंत जी को हिन्दी स्वच्छंदतावादी काव्य के तीन मुख्य हस्ताक्षरों में सम्मिलित किया गया है। उन्होंने एक लम्बी यात्रा की है और अनेक काव्य आन्दोलनों को देखने का अवसर उन्हें मिला है।वे अपने अछूते प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए विख्यात है और जिसने उनकी आरम्भिक कविताओं के आधार पर उन्हें ''प्रकृति का कवि'' कहलाने का गौरव दिया।''(1)

साहित्य और प्रकृति –

साहित्य में जीवन की व्याख्या है और प्रकृति मानव जीवन का अभिन्न अंग है। अतः वह मानव जीवन की व्याख्या होती है और प्रकृति मानव जीवन का अभिन्न अंग है। अतः वह मानव जीवन की व्याख्या का एक अनिवार्य उपादान बन जाती है। फिर भावुक साहित्यकार का तो प्रकृति से अत्यन्त अविच्छिन्न सम्बन्ध है। प्रकृति कवि के लिए सृजन की अद्वितीय प्रेरणा भी रही हैं और अनेकत्र वह उसका वर्ण्य – विषय तथा आकर्षण पदार्थों के वर्णन में। कालिदास और भवभूति में भी ऐसी ही प्रतिभा के दर्शन होते हैं। वाल्मीकि – रामायण, मेघदूत, ऋतुसंहार, रघुवंश, उत्तररामचरित, अभिज्ञानशाकुंतलम् आदि संस्कृत काव्यों एवं नाटकों में प्रकृति का बड़ा हृदयग्राही वर्णन मिलता है। कालिदास का 'मेघदूत' तो प्रकृति के रमणीय चित्रों का कोष है। भवभूति के – 'उत्तररामचरित' में रम्य एवं उग्र दोनों प्रकार के प्रकृति चित्र सहज एवं स्वाभाविक रूप में अंकित है। परवर्ती संस्कृत साहित्य में कालिदास और भवभूति जैसे प्रकृति –चित्रण प्राप्त नहीं।

प्राचीन हिन्दी काव्य में प्रकृति – चित्रण

प्राचीन हिन्दी – काव्य (आदिकाल से रीतिकाल तक) में प्रकृति का प्रयोग उद्दीपन एवं अलंकरण – हेतु ही किया गया है। कतिपय कवियों ने आलम्बनगत चित्र भी अंकित किए हैं, फिर भी आधुनिक काल से पूर्व प्रकृति का स्वतंत्र एवं पूर्व व्यक्तित्व हिन्दी काव्यमें नहीं उभर सका। मध्ययुगीन हिन्दी काव्य में प्रकृति साध्य न होकर साधन ही रही है तथा कवियों का प्रकृति के प्रति शुद्ध अनुराग दृष्टिगत नहीं होता। मैथिलकोकिल विद्यापति ने भी उद्दीपन, अलंकरण आदि के लिए ही प्रकृति का प्रयोग किया है। कहीं – कहीं मानवीकरण की प्रवत्ति भी कवि में दृष्टिगत होती है। आलम्बन रूप में प्रकृति वर्णन करते हुए विद्यापति ने 'बसंत' का वर्णन किया है –

''नाचए जुवति जना हरखित मना जनमल बाल बधाई है।

मधुर, महारस मंगल गाएव मानिनि मान उड़ाई हे।''(2)

भक्तिकालीन संत काव्य में जगत् और प्रकृति को मिथ्या स्वीकारा गया है। अतः प्रकृति के प्रति शुद्ध अनुराग की भावना इस काव्य में सुलभ नहीं। फिर भी सन्त कवियों ने अलंकार, प्रतीक, रहस्य, भावना एवं उपदेश – मूलक रूप में प्रकृति का उपयोग किया है। सेनापति अपने प्रकृति चित्रों के लिए प्रसिद्ध है डॉ. खण्डेलवाल लिखते हैं – 'रीतिकाल के कवियों में सेनापति एक ऐसे कवि हैं जिनकी आँख प्रकृति के प्रति बहुत सजग दिखाई पड़ती है। युग – प्रवृत्ति से वे भी प्रकृति का प्रयोग उद्दीन के लिए करते हैं , किन्तु प्रकृति के मानव –निरपेक्ष वर्णन की ओर ही उनका हृदय ढला हुआ जान पड़ता है। सेनापति के विषय में कहा गया है–

'' रितु वर्णन अद्भुत कियौ सेनापति कविराज।

एकै रचना नाम कौ तब सुकवि समाज।।'' (3)

आधुनिक काल में प्रकृति – चित्रण

आधुनिक काव्य का प्रारंभ भारतेन्दु के काव्य से माना जा सकता है। भारतेन्दु युग आधुनिक युग का प्रवेश – द्वार है। भारतेन्दुकालीन कवियों में प्राचीन और नवीन काव्य –प्रवृत्तियों का समन्वय है। अतः प्रकृति का प्रधानतः परम्परागत रूप में ही प्रयोग हुआ है। भारतेन्दु, ठाकुर जगमोहन सिंह आदि ने कछ आधुनिक ढंग की प्रकृति –चित्रण संबंधी कविताएं भी लिखी हैं। इस दिशा में भारतेन्दु रचित 'गंगा वर्णन' एवं यमुना वर्णन' उल्लेखनीय है 'गंगा वर्णन' की कुछ पंक्तियां इस प्रकार है –

''नव उज्जवल जलधार , हार हीरक सो सोहति।

बिच –बिच छहरति बूंद, मध्य मुक्तामनि पोहति।।''(4)

भारतेन्दु युग एवं द्विवेदी युग के स्वच्छन्दतावादी कवियों – श्रीधर पाठक , रूपनारायण पाण्डेय, मुकुटधर पाण्डेय तथा रामनरेश त्रिपाठी ने प्रकृति के सुन्दर बनी है। पंत जैसे कवि ने लिए वह काव्य की प्रेरणा रही है।

प्रकृति –प्रयोग को निम्नलिखित वर्गों में विभक्त किया जाता है –

1. आलम्बन रूप में –

भावुक कवि के लिए प्रकृति का स्वतंत्र अस्तित्व एवं पूर्व व्यक्तित्व है। उसका एक निजी संसार है जहां वह मानव के समान ही सुख–दुःखमय जीवन–यापन करती है। जब कवि

प्रकृति में किसी प्रकार की भावना का अध्याहार न करके उसका यथातथ्य वर्णन करता है तो वह आलम्बनगत विशुद्ध प्रकृति चित्रण कहलाता है। इसमें कवि की सुक्ष्म पर्यवेक्षण दृष्टि का परिचय मिलता है। इस रूप में प्रकृति कवि के लिए साधन न बनकर साध्य बन जाती है। उसका मन प्राकृतिक सौन्दर्य पर रीझ उठता है, उसमें तल्लीनता अनुभव करता है और हृदय की मुक्तावस्था को प्राप्त करता है। श्रृंगार – प्रधान रचनाओं में उद्दीन रूप का प्राभान्य रहता है। विरह –काव्य तो इसके बिना चल ही नहीं सकते। उद्दीन रूप में प्रकृति नायक –नायिका को योगावस्था में उल्लसित करती है तथा वियोग में उनकी विरह भावना को और उद्दीप्त करती है। वियोगावस्था में कभी तो गोपियों को संध्या होने पर यह स्मरण आता है (सूरसागर)–

'' एहि बेरियाँ बन तें चलि आवते।

दूरहिं ते वह बेनु, अधर धरि बजावते।।''(5)

2. मानवीकरण रूप में –

प्रकृति में चेतना का आरोपण ही मानवीकरण कहलाता है। भावुक कवि के लिए प्रकृति मानव का रूप धारण कर लेती है और उसी के समान सभी क्रिया–कलाप करती प्रतीत होती है। छायावादी कवियों ने प्रकृति के इस रूप का सर्वाधिक वर्णन किया है। निराला की 'जूही की कली' तथा 'संध्या सुन्दरी' पंत की 'छाया' , 'बादल' तथा 'संध्या' , प्रसाद की 'किरण' तथा महादेवी की 'बसंत', 'रजनी ' कविताओं में प्रकृति मानवीकरण रूप में चित्रित है। एक उदाहरण इस प्रकार दृष्टव्य है –

कहो तुम रूपसि कौन

व्योम से उतर रही चुपचाप,

छिपि निज छाया छवि में आप,

सुनहला फैला केश कलाप

मधुर, मन्थर, मृदु मौन !

3. उपदेशात्मिका रूप में –

साहित्य में प्रकृति का इस रूप में चित्रण पुराना है। भावुक कवि को मानव – जगत् की शिक्षा की अपेक्षा उसके आदर्शों की तुलना में प्रकृति –जगत् की शिक्षा अधिक महत्वपूर्ण प्रतीत होती है, उसकी सामान्यतम वस्तु उसे बड़े –बड़े युग पुरूषों एवं ऋषियों से भी अधिक महत्वपूर्ण शिक्षा दे सकने में समर्थ प्रतीत होती है। प्राचीन हिन्दी काव्य में कबीर, तुलसी, बिहारी आदि के काव्य में प्रकृति उपदेशिका के रूप में अंकित है। आधुनिक छायावादी कवियों ने अधिक भाव – प्रवणता के साथ इस रूप में प्रयोग किया है। पंत के लिए प्रकृति शिक्षिका के रूप में प्रस्तुत होती है। प्रकृति की दिव्य शिक्षण – शक्ति से चमत्कृत होकर वे संगीत शिक्षा के लिए मधुप – कलिका से प्रार्थना करते हैं –

'' सिखा दो ना हे मधुपकुमारि

मुझे भी अपने मीठे गाम।''

4. रहस्यात्मक रूप में –

प्रकृति में रहस्य दर्शन की परम्परा अति प्राचीन है तथा आधुनिक कवियों ने भी इसका प्रचुर प्रयोग किया है। वैदिक काल से ही मानव ने प्रकृति में परम तत्व का अन्वेषण किया है।

भक्तिकाल में महाकवि जायसी ने प्रकृति के माध्यम से रहस्य भावना को व्यक्त किया है। आधुनिक कवियों ने प्रकृति में जिज्ञासा एवं कोतुहल – सम्पन्न रहस्य – भावना को अभिव्यक्ति दी है। पंत की ''नौका विहार'' तथा ''एक तारा'' आदि कविताएं दर्शन की छटा भी लिए हैं –

'' हे जगजीन के कर्णधार ।
चिर जन्म मरण के आर–पार,
शाश्वत जीवन नौका –विहार।''(6)

5. पृष्ठभूमि एवं वातावरण निर्माण के रूप में –

भावों को अधिक प्रभावोत्पादकता प्रदान करने के लिए प्रकृति का इस रूप में चित्रण किया जाता है। इसमें वस्तुओं के वर्णन पर कवि की दृष्टि अधिक नहीं रहती उसका ध्यान उस वातावरण के चित्रण पर अधिक रहता है जिसका सम्पूर्ण अंग वे वस्तुएं हैं। प्रसाद एवं पंत ऐसे चित्रणों में सिद्धहस्त हैं। 'कामायनी' में जल – प्लावन के अनन्तर मानव –सभ्यता के विकास की प्राकृतिक पृष्ठभूमि का वर्णन इस प्रकार किया गया है –

''उषा सुनहले तीर बरसती,
जयलक्ष्मी सी उदित हुई।
उधर पराजित कालरात्रि भी,
जल में अन्तर्निहित हुई।।''

6. आलंकारिक रूप में –

आलंकारिक रूप में प्रकृति का वर्णन करते हुए कवि प्रायः उपमानों को प्रकृति के क्षेत्र से संग्रहित करते हैं। प्राचीन कवियों ने भी प्रकृति के क्षेत्र से उपमानों का चयन कर भाव

एवं वस्तु– वर्णन को अलंकृत किया है। खंजन, मीन, कमल, चन्द्रमा, भ्रमर आदि उपमान मध्यकालीन काव्य में प्रचुरता से प्रयुक्त हुई है। आधुनिक छायावादी कवियों ने नवीन उपमानों की खोज की है, इस प्रकार दृष्टव्य है –

'' मेरा पावस ऋतु जीवन,

मानस सा उमड़ा अपार मन।

गहरे धुंधले धुले सांवले,

मेघों से मेरे भरे नयन।।

7. प्रतिकात्मक रूप में –

उपमानों की तरह प्रकृति के क्षेत्र से कवियों के प्रतीकों को भी ग्रहण किया है। निम्नांकित पंक्तियों में प्राकृतिक पदार्थों का प्रतीक रूप में प्रयोग दृष्टव्य है –

'नयन में जिसके जलद वह तुषित चातक हूँ

जिसके प्राण में वह निठुर दीपक हूँ,

फूल तो उर में छिपाए विकल बुलबुल हूँ।

8. दूती रूप में –

प्रकृति को दूत बनाकर उसके माध्यम से सन्देश भेजने की परंपरा संस्कृत एवं हिन्दी साहित्य में पर्याप्त रूप में मिलती है। कालिदास के 'मेघदूत' में यक्ष बादल की दूत बनाकर अपनी प्रिया के पास सन्देश भेजता है। 'पद्मावत' में नागमती 'परेवा' द्वारा अपना संदेश भेजती

है। हरिऔंध के ''प्रिय–प्रवास' में राधा पवन से दूत का कार्य लेती है। गुप्त की यशोधरा नदी के द्वारा अपना संदेश भेजती हैं –

''दिवस का अवसान समीप था

गगन था कुछ लोहित हो चला

तरू शिखा पर थी अब राजती

कमलिनी कुलवल्लभ की प्रभा।(7)

भारतीय काव्य में प्रकृति – चित्रण –

भारतीय काव्य में प्रकृति – चित्रण की परम्परा का आरम्भ वैदिक काल से होता है वैदिककालीन मानवीय सभ्यता का विकास प्रकृति के उन्मुक्त प्रांगण में हुआ। मंत्र –दृष्टा ऋषियों ने ऋचाओं में प्रकृति के प्रति अपने अनुराग को व्यक्त किया। विशेषतः मानवीकरण की प्रवृत्ति का इस काल के साहित्य में बाहुल्य है। उषा, संध्या, रात्रि, नदी आदि को नारी रूप में अंकित किया गया है। आधुनिक छायावादी काव्य में प्रकृति –चित्रण संबंधी जिस मानवीकरण की प्रवृत्ति का प्रधान्य है उसका मूल इसी वैदिक साहित्य में सन्निहित है। संस्कृत – साहित्य में प्रकृति चित्रण की परंपरा अत्यन्त समृद्ध रही है। वाल्मीकि, कालिदास तथा भवभूति ने दृश्य – चित्रण में अपनी अलौकिक प्रतिभा का परिचय दिया है। ऐसा प्रतीत होता है कि इन कवियों ने प्रकृति –चित्रण को अपने काव्य का नित्य लक्षण ही बना लिया था।

प्रसाद के प्रकृति – चित्रों में प्रकृति के उग्र रूपों को भी स्थान मिला है। इस दृष्टि से कामायनी के अंतर्गत प्रकृति के भीषण प्रलग का चित्रण विश्व –साहित्य की एक अनुपम वस्तु है। प्रलय की प्रचण्डता का एक रोमाँचक दृश्य प्रस्तुत है –

'' हाहाकार हुआ कन्दनमय कठन कुलिश होते थे चूर।

हुए दिगन्त बाधिर, भीषण रव बार–बार होता था कूर।

दिग्दाहों के धूम उठे, या जलधर उठे क्षितिज तट के।

सघन गगन में भीम प्रकम्पन झंझा के चलते झटके।

आधुनिक युग में छायावादी कवियों का प्रकृति चित्रण समस्त हिन्दी काव्य में विशिष्ट स्थान का अधिकारी है। डॉ. देवराज ने छायावाद की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए छायावादी काव्य को ''प्रकृति काव्य'' की संज्ञा दी है। छायावाद में ही प्रकृति को स्वछंद व्यक्तित्व प्राप्त हुआ है। हिन्दी काव्य में छायावाद में पूर्ण प्रकृति या तो आध्यात्मिक भावों के प्रकाशन के लिए प्रयुक्त होती थी। अलंकार रूप में वह चित्रित होती थी। छायावादी कवियों ने ही सर्वप्रथम इन रूढ़ियों को छिन्न –भिन्न कर प्रकृति को स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान किया है। प्रकृति के जितने भी रूप साहित्य में प्राप्त होते हैं वे सब छायावादी कवियों में सहज प्राप्त हो जाते हैं।

पंत काव्य में कोमलता के कव्य –

पंत की कविता में कोमलता की प्रमुखता होने के कई कारण हैं पहला तो उस समय की मांग कही जा सकती है, जिसके फलस्वरूप कवि को कोमलता का प्रश्रय लेना पड़ा। जिस समय पंत ने काव्य जगत में प्रवेश किया था, उस समय खड़ी बोली अपने खुदरेपन में खड़खडाहट के कारण बदनाम थी। ब्रज भाषा में जो माधुर्य और मृदुलता थी उसका प्रभाव भी खड़ी बोली की कविता में नहीं आ पाया था। द्विवेदी जी की प्रेरणा में कुछ कवि खड़ी बोली में कविता करने तो लगे थे लेकिन वे खड़ी बोली में कोमलता व मधुरता की स्थापना नहीं कर पा रहे थे। उनके ऐसा नहीं कर सकने का एक विशेष कारण था और यह कारण था द्विवेदी जी की अतिसंयमप्रियता जिसके कारण उन्होंने प्रेम, सौन्दर्य, श्रृंगार आदि कोमल भावों में वर्णन करना कविता के लिए त्याज्य बना रखा था। पंत जी ने काव्य में मधुर और कोमल भावों का चित्रण तो किया ही उसके

साथ में खड़ी बोली को प्रयत्न करके कोमल बनाया। दुसरा कारण था पंत का रोमांटिक कवियों से प्रभावित होना। पंत जी अंग्रेजी के रोमांटिक युग के कवि शैले, कीट्स आदि से विशेष प्रभावित थे और वे सभी कवि कल्पना के कोमल लोक में विचरण किया करते थे तथा उस लोक की कोमल छवियां अपनी कविताओं में प्रस्तुत करते रहते थे। इस कारण पंत जी का वह कोमल और सुन्दर व्यक्तित्व है जो किसी भी प्रकार कम आकर्षण नहीं है पंत जी का व्यक्तित्व इतना कोमल और लुभावना है कि बहुत से व्यक्ति उन्हें पुरूष वेश में नारी समझने की भूल कर बैठते हैं। सुप्रसिद्ध कवयित्री महादेवी वर्मा ने ''पंत के साथी'' नामक पुस्तक में पंत से संबंधित स्मरण लिखते हुए अपनी ऐसी ही भूल का वर्णन किया है। जब वे सम्प्रेषण में पंत को नारी समझ बैठी थी। अभिप्राय यह है कि उनके व्यक्तित्व है जिनके बीच कवि पंत का जन्म और उनके प्रारंभिक जीवन का विकास हुआ। कवि का जन्म प्रकृति की सुरंभ गोद कुमारचल प्रदेश में हुआ था। इस प्रकार वे प्रकृति के कोमल बाहों में विकसित हुए। प्राकृतिक सुन्दर और सुकुमार भेद में ही अपना अधिकांश प्रारंभिक जीवन बिताने तथा जनजीवन के संघर्ष से दूर रहने के कारण कोमलता उसके मन, प्राणों में बस गई थी और यही कारण है कि कवि संघर्षों और कठोरता से अपने को बचाता रहा और उसकी प्रकृत्ति सुकुमार होती गई। कविवर पंत ने इस बात को स्वीकार करते हुए एक स्थान पर लिखा है, '' प्रकृति के साहचार्य ने जहां मुझे सौन्दर्य, स्वप्न और कल्पनाजीवी बनाया, वहां दूसरी ओर वनभीरू भी बना दिया। यही कारण है कि जन समूह से अब भी मैं दूर भागता हूं और मेरे आलोचकों का यह कहना बहुत अंशों तक ठीक ही है कि मेरी कल्पना लोगो के सामने आने से लजाती है।''1

पंत काव्य में कोमलता का स्वरूप –

निश्चय ही कवि पंत कोमल कल्पनाजीवी हैं। उनको ''कोमल'' या ''सुकुमार'' कवि कहना सवर्था युक्तिसंगत है। कोमल कवि वह होता है जो जीवन की कटुताओं एवं संघर्षों से दूर रहे। भीषणताओं से उसे दूराव हो तथा नई कोमल कल्पनाओं में डूबने और सुन्दर आकर्षण छवियों

से उसे प्यार हो। कवि ने अपनी कोमल प्रकृति के बारे में अपने कवि जीवन की अनेक मंजीले पार कर लेने के बाद ''उत्तरा'' की एक कविता में स्पष्ट घोषणा कर दी है –

''मैं स्वप्नों का प्रेमी मुझको

करता न सत्य जग मोहित,

मैं फुलों के फुल में जन्मा

फुल का हो मूल्य जगत् के हित।''

प्रकृति के कोमल रूपों का अंकन –

पंत के प्रकृति वर्णन में भी कोमलता के प्रमाण बहुत पुष्ट रूप में मिलते हैं। प्रकृति का उनके काव्य में सर्वाधिक चित्रण हुआ और उसके कोमल और सुन्दर रूप का ही वर्णन उन्होंने अपनी कविता में किया है। भीषण रूप की ओर उनकी दृष्टि बहुत कम गई है। 'आधुनिक कवि की भूमिका में पंत ने इसे स्वीकार भी किया है – ' साधारणतः प्रकृति के सुन्दर रूप ने ही मुझे अधिक लुभाया है– यह सत्य है कि प्रकृति का उग्र रूप मुझे कम रूचता है। पंत जी कोमलता प्रिय होने के कारण ही प्रकृति के खण्ड या लघु चित्रों को अधिक अंकित किया है। प्रसाद की भांति उनके प्रकृति चित्र न तो विराट् है और न ही वे अपना समष्टिगत प्रभाव पाठक पर छोड़ते हैं। कवि को कोमलता से इतनी लगाव है कि प्रकृति की भीषण उपादानों को भी कई स्थलों पर कोमल रूप दे दिया है। '' चांदी के सांपों – सी रलमल'' में कवि ने चांदी का सांप बनाकर उसकी भीषणता का हरण करके उसे कोमल रूप कर दिया है।

प्रकृति का कोमलांगिनी नारी के रूप में चित्रण –

कोमलता के अतिरेक में कवि प्रकृति को अनेक स्थानों पर कोमलांगिनी नारी के रूप में वर्णित किया है। स्वयं पंत के शब्दों में – '' प्रकृति को मैने अपने से अलग सजीव रहने वाली नारी के रूप में देखा है। '' –

''उस फैले हरियाली में

कौन अकेली खेल रही माँ।

वह अपनी वथह –वाली में .....।''

उपर्युक्त पंक्तियां मेरी इस धारणा की पोषक है कभी जब मैने प्रकृति में तदात्मय में अनुभव किया है , तब मैंने अपने को भी नारी रूप में अंकित किया है। कविता का नारी रूप में अंकन करना निश्चित ही कोमलता के चरम परिवर्तन का उदहरण है। '' लाई हूँ फलों का ह्यस , लोगी माल, लोगी मोल गीत में कवि ने स्वयं को नारी रूप में अंकित किया है।''

निष्कर्ष –

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि पंत के काव्य में जिस प्रकार प्रकृति के अनुपम रूपों की छटा दृष्टिगत है वैसा अन्यत्र देखने को नहीं मिलता। प्रकृति –प्रेम से आरम्भ होने वाली उनकी कविता नारी –प्रेम और सौन्दर्य , मानवतावाद और दिव्य –मानव की परिकल्पना को मुखरित करती हुई विकासशील रही है। एक ओर छायावादी कवियों में वे मूर्धन्य हैं तो प्रगतिवादी कवियों में भी अग्र हैं। 'कला और बूढ़ चांद' मे प्रयोगवादी काव्य –प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व है तो आध्यात्म– जगत् को काव्य का विषय बनाने में अपना अलग ही स्थान है। इस प्रकार अधिकाधिक काव्य प्रवृत्तियों को स्वर देने वाली पंत की कविता अत्यन्त समृद्ध है । उसमें भाव–पक्ष के साथ –साथ कला पक्ष का भी उत्कृष्ट रूप देखने को मिलता है। मानव ने जब से आँखें खोली है अपने को प्रकृति की रम्य क्रोड में क्रीड़ा करते हुए पाया है। प्रकृति सदैव से मानव–जीवन से अभिन्न रूप से जुड़ी रही है। यही कारण है कि जीवन की अभिव्यक्ति से भी प्रकृति का सनातन संबंध रहा है, हर युग में, हर देश के कवियों ने प्रकृति के नाना उपादानों से अपनी कविता – कामिनी का श्रृंगार किया है।

आधुनिक युग में छायावादी कवियों का प्रकृति –चित्रण समस्त हिन्दी काव्य में विशिष्ट स्थान का अधिकारी है। प्रकृति छायावादी कवि की प्रेरणा और उसके काव्य की धड़कती हुई चेतना है। इस प्रकार आदिकाल से लेकर अधुनातम हिन्दी काव्य में प्रकृति – वर्णन विविध रूपों में होता है। प्रत्येक युग के साहित्यकार ने अपने युगबोध, परिस्थितियों एवं निजी दृष्टिकोण के अनुसार प्रकृति –चित्रण किया है। जिससे हिन्दी काव्य के प्रकृति चित्रण में वैविध्य एवं अनेकोन्मुखता दर्शनीय है। आधुनिक काव्य विशेष रूप में छायावादी काव्य में कवि का प्रकृति के प्रति सर्वाधिक आकर्षण रहा है। यही कारण है कि मानव और प्रकृति में तादात्म्य स्थापित करने में छायावादी कवि सर्वाधिक सफल हुए हैं तथा छायावादी कवियों में सुमित्रानंदन पंत का नाम उल्लेखनीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ. प्रेमशंकर, हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल, वर्ष 1974, पृष्ठ 290।

2. जैन डॉ. संजीव कुमार, प्राचीन काव्य, कैलाश पुस्तक सदन भोपाल, वर्ष 2015 , पृष्ठ 40 ISBN - 978-81-89900-571

3. श्रीवास्तव डॉ. राजेश, हिन्दी साहित्य का प्राचीन इतिहास, कैलाश पुस्तक सदन भोपाल, वर्ष 2014, पृष्ठ 270, ISBN - 978-93-82836-16-4

4. kavitakosh.org - कविता कोश – गंगा–वर्णन : भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।

5. शुक्ल डॉ. रामचन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, कमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997 पृष्ठ 124।

6. जैन डॉ. संजीव कुमार, आधुनिक काव्य : पंत से मुक्तिबोध तक युग एवं प्रवृत्तियां, कैलाश पुस्तक सदन भोपाल, वर्ष 2015 , पृष्ठ 16 ISBN - 978-93-82836-92-6

7. तिवारी पूनमचंद्र, द्विवेदीयुगीन काव्य की विधाएं, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी (म0प्र0) ,1972 पृष्ठ 395 |